दिखाती है,
के जाती है?

पाई,
दायी?
ने पाई,
न्यायी।

सी आती है,
के जाती है?

शुभ कार्य सिद्ध करवाने को आचार्य सन्त हों सुलभ जहाँ,
तो इससे बढ़कर भाग्य भला हो सकता है क्या और वहाँ?
यह तुम्हें खोजता हुआ स्वयं आया है उलटा सुफल यहाँ,
तुम चूक गये यह समय कहीं तो यही काल बन जाय न, हाँ!

पय-वंचित होकर प्रतिक्रिया विष ही विशेष बरसाती है,
यह धरती अचला होने से कब साथ किसी के जाती है?

●

[निवेदक] —मैथिलीशरण गुप्त

भू-दा न-य ज्ञ

[महत्वपूर्ण प्रवचन]

●

विनोबा

१९५२

सस्ता साहित्य मण्डल-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय, मंत्री
सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

तीसरी बार : १९५२
कुल प्रतियां : २५०००

मूल्य
चार आने

मुद्रक
देवीप्रसाद शर्मा
हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस
नई दिल्ली

विषय-सूची

●

प्रकाशकीय

आज की एक बहुत बड़ी समस्या भूमि के असमान बंटवारे की है। कुछ लोगों के पास आवश्यकता से अधिक भूमि है, कुछ के पास बिलकुल नहीं है। इससे सामान्य लोगों मे भीतर-ही-भीतर बड़ा असंतोष है और मानव-मानव के बीच गहरा फासला पैदा हो गया है।

अपनी तेलंगाना की पैदल-यात्रा में विनोबाजी ने इस समस्या का जो महत्वपूर्ण हल निकाला था उससे हम सब परिचित हैं। जगह-जगह घूमकर वह लोगों से जमीन इकट्ठी कर रहे हैं। तेलंगाना-यात्रा में उन्हे इस अनुष्ठान में पर्याप्त सफलता मिली। अब उत्तर भारत का प्रवास भी उसीके निमित्त जारी है।

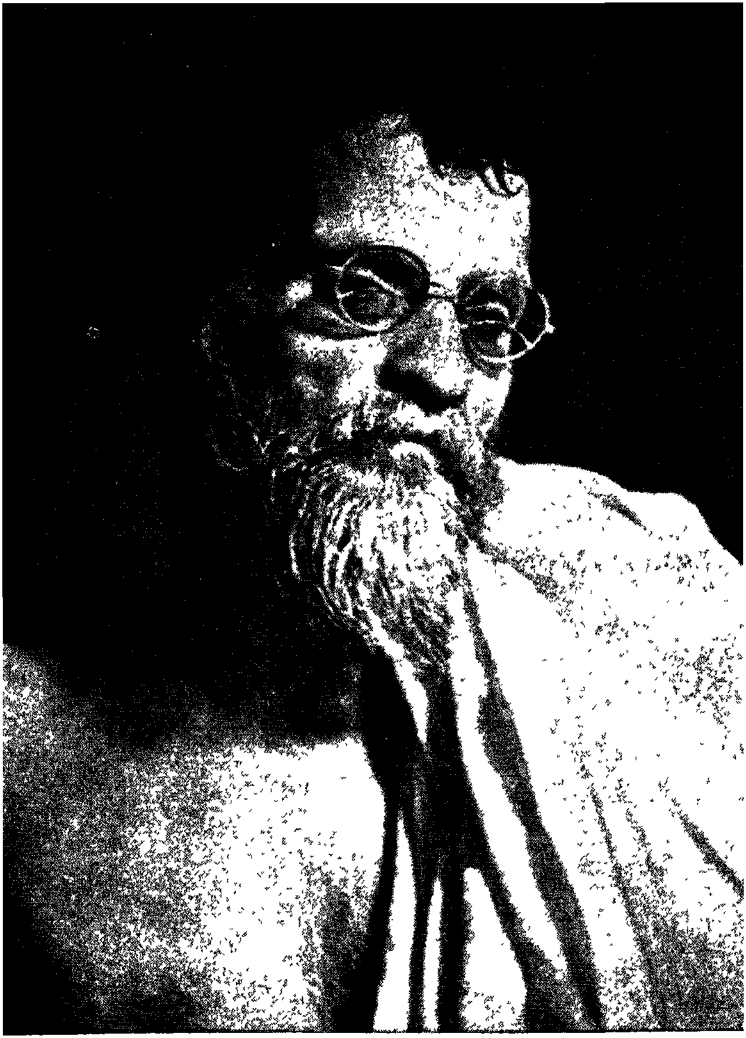
इस पुस्तक मे विनोबाजी के दो प्रवास-प्रवचन दिये गए हैं, जिनमें उन्होंने भूमिदान-यज्ञ के उद्देश्य, महत्व और उसके व्यापक प्रभाव पर प्रकाश डाला है। साथ ही आचार्य विनोबा कौन हैं और उनके अन्दर कितनी गहरी शक्ति है इस संबंध में गाधीजी का एक लेख दिया गया है और आचार्य काका कालेलकर का एक उपयोगी लेख, जो इस अनुष्ठान के महत्व पर प्रकाश डालता है, भूमिका के रूप में शामिल कर लिया गया है।

हमे विश्वास है कि इस पुस्तक की सामग्री से पाठकों को विनोबाजी के इस महान अनुष्ठान को समझने और उसमें योग देने की प्रेरणा मिलेगी।

तीसरा संस्करण

हमें हर्ष है कि कुछ ही दिनों मे इस पुस्तक का तीसरा संस्करण प्रकाशित हो रहा है। विनोबाजी का भू-दान-यज्ञ अब देश-व्यापी बनता जा रहा है। अत. यह स्वाभाविक ही है कि इस पुस्तक की माग भी बढे और भारत के प्रत्येक घर में पहुंचे। भू-दान-यज्ञ के सिलसिले मे विनोबाजी के दिल्ली-प्रवास के ग्यारह दिनों के महत्वपूर्ण प्रवचन भी 'राजघाट की सनिधि मे' के नाम से 'मंडल' से पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुके है।

—मंत्री



भू-दान-यज्ञ के प्रवर्त्तक
संत विनोबा

श्री विनोबा भावे कौन हैं ?

मेरे हिन्दुस्तान लौटने पर सन् १९१६ में विनोबा ने कालिज छोड़ा था। वे संस्कृत के पण्डित हैं। उन्होंने आश्रम में शुरू से ही प्रवेश किया था। आश्रम के सबसे पहले सदस्यों में से वे एक हैं। अपने संस्कृत के अध्ययन को आगे बढ़ाने के लिए वे एक वर्ष की छुट्टी लेकर चले गए। एक वर्ष के बाद ठीक उसी घड़ी, जबकि उन्होंने एक वर्ष पहले आश्रम छोड़ा था, चुपचाप आश्रम में फिर आ पहुंचे। मैं तो भूल भी गया था कि उन्हें उस दिन आश्रम में वापस पहुंचना था। वे आश्रम में सब प्रकार की सेवा-प्रवृत्तियों—रसोई से लगाकर पाखाना-सफाई तक—में हिस्सा ले चुके हैं। उनकी स्मरण-शक्ति आश्चर्यजनक है। वे स्वभाव से ही अध्ययनशील हैं; पर अपने समय का ज्यादा-से ज्यादा हिस्सा वे कातने में ही लगाते हैं और उसमें ऐसे निष्णात हो गये हे कि बहुत ही कम लोग उनकी तुलना में रखे जा सकते हैं। उनका विश्वास है कि व्यापक कताई को सारे कार्यक्रम का केंद्र बनाने से ही गांवों की गरीबी दूर हो सकती है। स्वभाव से ही शिक्षक होने के कारण उन्होंने श्रीमती आशादेवी को दस्तकारी के द्वारा बुनियादी तालीम की योजना का विकास करने में बहुत योग दिया है। श्री विनोबा ने कताई को बुनियादी दस्तकारी मानकर एक पुस्तक भी लिखी है। यह बिलकुल मौलिक चीज है। उन्होंने हंसी उड़ानेवालों को भी यह सिद्ध करके दिखा दिया है कि कताई एक ऐसी अच्छी दस्तकारी है कि जिसका उपयोग बुनियादी तालीम में बखूबी किया जा सकता है। तकली कातने में तो उन्होंने क्रांति ही ला दी है और उसके अन्दर छिपी हुई तमाम शक्तियों को खोज निकाला है। हिन्दुस्तान में हाथकताई में इतनी संपूर्णता किसीने प्राप्त नहीं की, जितनी कि उन्होंने की है।

उनके हृदय में छूआछूत की गंध तक नहीं है। साम्प्रदायिक एकता में उनका उतना ही विश्वास है जितना कि मेरा। इस्लाम धर्म की खूबियों को समझने के लिए उन्होंने एक वर्ष तक कुरानशरीफ का मूल अरबी में अध्ययन किया। इसके लिए उन्होंने अरबी भी सीखी। अपने पड़ोसी

मुसलमान भाइयों से अपना सजीव संपर्क बनाये रखने के लिए उन्होंने इसे आवश्यक समझा।

उनके पास उनके शिष्यों और कार्यकर्त्ताओं का एक ऐसा दल है जो उनके इशारे पर हर तरह का बलिदान करने को तैयार है। एक युवक ने अपना जीवन कोढ़ियों की सेवा में लगा दिया है। उसे इस काम के लिए तैयार करने का श्रेय श्री विनोबा को ही है।

विनोबा कई वर्षों तक वर्धा के महिला-आश्रम के संचालक भी रहे हैं। दरिद्रनारायण की सेवा का प्रेम उन्हें वर्धा के पास के एक गांव में खींच ले गया। अब तो वे वर्धा से पांच मील दूर पवनार नामक गांव में जा बसे हैं और वहां से उन्होने अपने तैयार किये हुए शिष्यों के द्वारा गांववालो के साथ संपर्क स्थापित कर लिया है। वे मानते हैं कि हिन्दुस्तान के लिए 'राजनैतिक स्वतंत्रता' आवश्यक है। वे इतिहास के निष्पक्ष विद्वान् है। उनका विश्वास है कि गांववालों को रचनात्मक कार्य-क्रम के बगैर सच्ची आजादी नही मिल सकती और रचनात्मक कार्यक्रम का केन्द्र है खादी। उनका विश्वास है कि चरखा अहिंसा का बहुत ही उपयुक्त बाह्य चिन्ह है। उनके जीवन का तो वह एक अग ही बन गया है। उन्होंने पिछली सत्याग्रह की लड़ाइयों मे सक्रिय भाग लिया था। वे राजनीति के मंच पर कभी लोगों के सामने आये ही नही। कई साथियों की तरह उनका यह विश्वास है कि सविनय आज्ञा-भंग के अनुसंधान में शांत रचनात्मक काम कही ज्यादा प्रभावकारी होता है, इसकी अपेक्षा कि जहां आगे ही राजनैतिक भाषणो का अखंड प्रवाह चल रहा है, वहा जाकर और भाषण दिये जायं। उनका पूर्ण विश्वास है कि चरखे मे हार्दिक श्रद्धा रखे बिना और रचनात्मक कार्य मे सक्रिय भाग लिए बगैर अहिंसक प्रतिकार सभव नही।

'हरिजन सेवक' से] —मो क. गांधी

विनोबाजी की भूमिदान-यात्रा

श्री विनोबा भावे की भूमिदान-यात्रा भारत के इतिहास में एक महत्त्व की और आशाभरी घटना है। तेलंगाना की यात्रा में जब उन्हें भूमि मिली तब चंद लोगों ने कहा कि साम्यवादियों के आतंक से त्रस्त हुए लोगों को भूमि दिये बिना चारा ही नहीं था। और जगह उन्हें ऐसी जमीन मिलना संभव नहीं।

अगर ऐसा ही होता तो भी तेलंगाना के भूमिदान का महत्त्व कम नहीं होता। जहां रोग है वहीं पर लोग दवा लेंगे। लोग कड़ुई लेकिन रास्त दवा लेने को तैयार हुये और लोगों को दवा देनेवाले सच्चे वैद्य मिले, यही बड़ी बात थी। लेकिन अब जो भूमि उन्हें स्थान-स्थान पर मिल रही है, उससे सिद्ध होता है कि हिन्दुस्तान में दैवी परिवर्तन या सात्विक क्रांति का वायुमंडल भगवान अपने एक पवित्र भक्त के द्वारा पैदा कर रहा है।

सचमुच विनोबाजी की श्रद्धा और आस्तिकता महात्माजी की परंपरा की है। हमारे देश में ऐसे आस्तिक लोग समय-समय पर पैदा होते आये है, यह कोई अनहोनी बात नही है। किंतु देश के सामान्य लोग ऐसों की बात सुनने को तैयार होते है, यही बताता है कि भारतवर्ष की प्रजा आस्तिक है। उसमें धर्म का प्राण प्रज्ज्वलित हो सकता है।

महात्मा गांधी ने राष्ट्र को सत्य और अहिंसा की दीक्षा दी और लोग सत्याग्रह के लिए तैयार हो गये। अंग्रेजों का राज्य एक जबरदस्त संस्था—कॉरपोरेशन—था (और उन्हीका तत्वज्ञान कहता है कि संस्था या कॉरपोरेशन की आत्मा नही होती।) ऐसे एक जबरदस्त कॉरपोरेशन की आत्मशक्ति का परिचय करने का काम गांधीजी के सत्याग्रह ने किया।

अब अहिंसा और सत्य के साथ अपरिग्रह और अस्तेय को हाथ में लेने की नौबत आई है। श्री विनोबा ने देखा कि आज के जमाने का प्रधान दोष है धन-निष्ठा। उसे दूर करने के लिए जो धन-संग्रह का प्रतीक है, उस पैसे को ही जीवन-क्रम में अप्रतिष्ठित करना जरूरी है।

उपवास-पूर्वक चिंतन करके वे एक निर्णय पर पहुंचे और उन्होंने धन का दान लेने से इन्कार किया। धन कमाने की बात उनके पास थी ही नहीं।

दुनिया में श्रम और धन दो तत्त्व हैं। श्रम से बचना हो तो धन-संग्रह करना चाहिए। जबतक धन की प्रतिष्ठा है तबतक श्रम चाहे जितना बढ़े, वह प्रतिष्ठित होने का नहीं। उन्होंने धन को अप्रतिष्ठित किया और श्रम की प्रतिष्ठा बढ़ाई। इतना जीवन-परिवर्तन करते ही उनको अपरिग्रह-व्रत की अथवा परिग्रह कम करने की दीक्षा देने का अधिकार प्राप्त हुआ। और भारत की भूमि, भारत की जनता धर्म का असर कबूल करने की अपनी परम्परा भूली नहीं है, इसका सबूत अनेक भूमिपतियों ने दिया।

हम कहते आये है कि रूस के पास एक रास्ता है। अमेरिका के पास दूसरा रास्ता है। भारत का रास्ता तीसरा है। लेकिन उसमें इस तीसरे रास्ते का चैतन्य आजतक उत्कट रूप से प्रकट नहीं हुआ था। कानून के द्वारा, सरकार के सामर्थ्य के द्वारा, अगर वह प्रकट होता तो उसे हम तीसरा रास्ता नही कह सकते थे। जिस भूमिदान-यज्ञ के श्री विनोबाजी अध्वर्यु है, उस दान में और अमेरिका में से जो सहायता का दान सारी दुनिया में फैल रहा है, उसमें जमीन-आसमान का अन्तर है। दोनों मे दीर्घ-दृष्टि है सही; किंतु एक में द्रव्यशक्ति पर विश्वास है। वे द्रव्यलोभ की वीणा पर अपना राग बजाते हैं। दूसरे दान की बुनियाद में आत्मशक्ति है। उसका भजन सात्विक है और अन्त में उसीकी विजय हो सकती है। सम्राट् ययाति और सम्राट् अशोक दोनों ने राज्य-वैभव का और राज्य-सामर्थ्य का असाधारण अनुभव करने के बाद तय किया कि भोग और ऐश्वर्य में न शांति है, न विश्वकल्याण। संग्रह को कम करो, खर्च को कम करो, तभी आत्मशक्ति जाग्रत होगी और दुनिया में शांति और बन्धुता फैल सकेगी।

'मंगल-प्रभात' से]

—काका कालेलकर

: १ :

भू-दान-यज्ञ की भूमिका

[तेलंगाना की ऐतिहासिक पैदल-यात्रा में विनोबाजी ने भू-दान-यज्ञ का श्रीगणेश किया था। उस यज्ञ की भूमिका, उसके उद्देश्य तथा महत्व पर अपने इस प्रवचन में उन्होंने विशद रूप से प्रकाश डाला है। इससे पाठकों को स्पष्ट ज्ञात हो जायगा कि विनोबाजी लोगों से क्या अपेक्षा रखते हैं। स्थान-स्थान पर ऐसे ही यज्ञ प्रारम्भ करने की प्रेरणा भी इससे लोगों को मिलेगी, ऐसा हमारा विश्वास है।]

संस्कृति की प्रक्रिया

हमारा यह मानव-समाज हजारों वर्षों से इस पृथ्वी पर जीवन बिता रहा है। पृथ्वी इतनी विशाल है कि पुराने जमाने में इधर के मानव की उधर के मानव से कोई पहचान नहीं रहती थी। हरएक को शायद इतना ही लगता था कि अपनी जितनी जमात है, उतनी ही मानव-जाति है। पृथ्वी के उधर क्या होता होगा, इसका भान भी शायद उन्हें नहीं था। लेकिन जैसे-जैसे विज्ञान का प्रकाश फैलता गया, मनुष्य का संपर्क सृष्टि के साथ बढ़ता गया और मानसिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, सभी दृष्टियों से मानवों का आपसी संपर्क भी बढ़ता गया। जब कभी दो राष्ट्रों का

या दो जातियों का संपर्क हुआ तो हर बार वह मीठा ही साबित हुआ हो, ऐसी बात नहीं है। कभी वह मीठा होता था, कभी कड़ुवा; लेकिन कुल मिलाकर उसका फल मीठा ही रहा। इस बात की मिसाल दुनिया भर में मिल सकती है। लेकिन सारी दुनिया की मिसाल हम छोड़ भी दें और केवल भारत का ही खयाल करें तो मालूम होगा कि बहुत प्राचीन जमाने में यहां जो आर्य लोग रहते थे, उनकी संस्कृति हिन्दुस्तान की पहाड़ी सस्कृति थी और दक्षिण में जो द्रविड़ लोग रहते थे, उनकी सस्कृति समुद्र की संस्कृति थी। इस तरह द्रविड़ों और आर्यों की संस्कृति के मिश्रण से एक नई संस्कृति बनी। पहले ये दोनों सस्कृतियां, उत्तर और दक्षिण की, अलग-अलग रही। हजारों वर्षों तक इन लोगों में आपस में कोई संबंध नहीं था, क्योंकि बीच में एक बड़ा भारी दंडकारण्य पड़ा था। लेकिन फिर दो जमातों का संबंध हुआ। उनमें से कुछ मीठे और कुछ कड़ुवे अनुभव आये और उसका नतीजा आज का भारतवर्ष है। द्रविड़ लोग वहां के बहुत प्राचीन लोग थे। द्रविड़ों और आर्यों, इन दोनों की संस्कृति के संगम का लाभ हिन्दुस्तान को मिला और उससे एक ऐसा मिश्र राष्ट्र बना, जिसमे उत्तर और दक्षिण के अच्छे अंश एक साथ अनजाने मिल गये, उत्तर और दक्षिण एक हो गए। उत्तर के लोग ज्ञान-प्रधान थे तो दक्षिण के लोग भक्ति-प्रधान थे। इस तरह ज्ञान और भक्ति का संगम हो गया; लेकिन इसके बाद यहां जो मिश्र समाज बना, उसकी व्यापकता भी एकांगी साबित हुई।

इस्लाम की देन

लेकिन बाहर से मुसलमान लोग यहां आए और अपने साथ एक नई संस्कृति ले आए। उनकी नई संस्कृति के साथ यहां की संस्कृति की टक्कर हुई। मुसलमानों ने अपनी संस्कृति के विकास के लिए दो मार्ग अपनाये, ऐसा दीखता है। एक हिंसा का और दूसरा प्रेम का। ये दो मार्ग दो धाराओं की तरह एक साथ चले। हिंसा के साथ हम गजनी, औरंगजेब आदि का नाम ले सकते हैं तो दूसरी तरफ प्रेम-मार्ग के लिए अकबर और कबीर का नाम ले सकते हैं। हमारे यहां जो कमी थी, वह इस्लाम ने पूरी की। इस्लाम सबको समान मानता था। यद्यपि उपनिषद् आदि में यह विचार मिलता है, लेकिन हमारी सामाजिक व्यवस्था में इस समानता की अनुभूति नहीं मिलती थी। हमने उसपर अमल नहीं किया था। व्यावहारिक समानता का विचार इस्लाम के साथ आया। इस्लाम के आगमन के समय यहां अनेक जातियां थीं। एक जाति दूसरी जाति के साथ न शादी-ब्याह करती थी, न रोटी-पानी। इस तरह जहां देखो, वहां चौखटें बनी हुई थीं; लेकिन धीरे-धीरे दो संस्कृतियां नजदीक आई। दोनों के गुणों का लाभ देश को मिला। इस सिलसिले में जो लड़ाई-झगड़े हुए और जो संघर्ष हुआ, उसका इतिहास हम जानते ही हैं। जो लोग यहां आये, उन्होंने तलवार से हिन्दुस्तान जीता या हिन्दुस्तान के लोग लड़ाई में हार गये, यह कोई नहीं कह सकता; बल्कि लड़ाइयां हुई, उसके पहले ही फकीर लोग यहां आए। वे गांव-गांव घूमे और उन्होंने

इस्लाम का संदेश पहुंचाया। यहां के लिए वह चीज एकदम आकर्षक थी।

बीच के जमाने में हिन्दुस्तान में बहुत-से भक्त हुए, जिन्होंने जातिभेद के खिलाफ प्रचार किया और एक ही परमेश्वर की उपासना पर जोर दिया। इसमें इस्लाम का बहुत बड़ा हिस्सा था। हिन्दुस्तान को इस्लाम की यह बड़ी देन है। इस तरह पहले ही जो संस्कृति द्रविड़ और आर्यों की अच्छाइयों के मिश्रण से बनी थी, उसमें यह नया रसायन दाखिल हुआ।

पश्चिम का हविर्भाग

इसके बाद कुल तीन सौ साल पहले की बात है। यूरोप के लोगों को मालूम हुआ कि हिन्दुस्तान बड़ा संपन्न देश है और वहां पहुंचने से लाभ हो सकता है। इसी समय यूरोप में विज्ञान की प्रगति हुई। वे लोग हिन्दुस्तान आ पहुंचे। हिन्दुस्तान में अभी तक जो प्रगति हुई थी, उसमें विज्ञान की कमी थी। यह नहीं कि विज्ञान यहां था ही नहीं। यहां वैद्यक-शास्त्र मौजूद था, पदार्थ-विज्ञान-शास्त्र मौजूद था, लोगों को रसायन-शास्त्र का ज्ञान था। अच्छे मकान, अच्छे रास्ते, अच्छे मदरसे यहां बनते थे—यानी शिल्प-विज्ञान भी था। अर्थात् हिन्दुस्तान एक ऐसा प्रगतिशील देश था, जहां उस जमाने में अधिक-से-अधिक विज्ञान मौजूद था। लेकिन बीच के जमाने में यहां विज्ञान की प्रगति कम हुई। उसी जमाने में यूरोप में विज्ञान का आविष्कार हुआ और पाश्चात्य लोग यहां आ पहुंचे। अब उनके और हमारे बीच संघर्ष

शुरू हुआ। उनके साथ हमारा संबंध कड़ुवा और मीठा दोनों प्रकार का रहा तथा अब इस मिश्रण से एक और नई संस्कृति बनी। कुछ मिश्रण तो पहले ही हो चुका था। फिर जो-जो प्रयोग यूरोपवालों ने अपने देश में किये, उनके फलस्वरूप न सिर्फ भौतिक जीवन में; बल्कि समाजशास्त्र आदि में भी परिवर्तन हुए और जैसे-जैसे अंग्रेज, फ्रेंच, जर्मन, रशियन आदि के विचारों से परिचय होने लगा, वैसे-वैसे वहां के नव-विचारों का संबंध भी बढ़ने लगा। आज हम जहां जाते हैं, वहां सोशलिज़्म, कम्युनिज़्म आदि पर विचार सुनते हैं। ये सारे विचार पश्चिम से आये हैं। अब इन सब विचारों में झगड़ा शुरू हुआ है। उसमें से कचरा-कचरा निकल जावेगा। हमारी संस्कृति कुछ खोयेगी नहीं; बल्कि कुछ पायेगी ही। यही देखो न! हिन्दुस्तान में—बावजूद इसके कि पश्चिम के विचारों का प्रवाह निरंतर यहां आता रहा—पहले के जमाने में जितने आध्यात्मिक विचारवाले महापुरुष पैदा हुए, उनसे कम इस जमाने में नहीं हुए। यहां नाम गिनने में तो समय जायेगा। अब इस समय भी संघर्ष हो रहा है, टक्कर हो रही है, मिश्रण हो रहा है। यह जो बीच की अवस्था है, उसमें कई प्रकार के परिणाम होते हैं।

यह तो मैंने प्रस्तावना के तौर पर अपने कुछ विचार रखे, ताकि हिन्दुस्तान की हालत आप लोग अच्छी तरह समझ सकें।

कम्युनिस्टों में विचार का उदय

गांधीजी के जाने के बाद जब मैं सोचता रहा कि अब मुझे क्या करना चाहिए तो मैं निर्वासितों के काम में लग

गया। परन्तु यहाँ के कम्युनिस्टों के प्रश्न के बारे में मैं बराबर सोचता रहा। यहां की खून आदि की घटनाओं के बारे में मुझे जानकारी मिलती रहती थी, फिर भी मेरे मन में कभी घबराहट नहीं हुई; क्योंकि मानव-जीवन के विकास का कुछ दर्शन मुझे हुआ है। इसलिए मैं कह सकता हूं कि जब-जब मानव-जीवन में नई संस्कृति का निर्माण हुआ है, वहां कुछ संघर्ष भी हुआ है, रक्त की धारा भी बही है। इसलिए हमें बिना घबराये शांति से सोचना चाहिए और शांतिमय उपाय ढूंढना चाहिए।

यहां शांति के लिए सरकार ने पुलिस भेज दी है; लेकिन पुलिस कोई विचारक होती है, ऐसी बात नहीं है। वह तो शस्त्रसंपन्न होती है और शस्त्रों के जोर पर ही मुकाबला करती है। इसलिए जंगल में शेरों के बंदोबस्त के लिए पुलिस को भेजना बिलकुल कारगर हो सकता है और वह पुलिस शेरों का शिकार करके हमें उन शेरों से बचा सकती है; लेकिन यह कम्युनिस्टों की तकलीफ शेरों की नहीं, मानवों की है। उनका तरीका चाहे गलत क्यों न हो, उनके जीवन में कुछ विचार का उदय हुआ है, और जहां विचार का उदय हुआ होता है, वहां सिर्फ पुलिस से प्रतिकार नहीं हो सकता। सरकार यह बात जानती है। बावजूद इसके, अपना कर्त्तव्य समझकर सरकार ने पुलिस की योजना की है। इसलिए मैं उसे दोष नहीं देता।

विचार-शोधन का प्रमुख साधन : चरैवेति

तो मैं इस तरह प्रस्तुत समस्या के बारे में सोचता था

और मुझे तब सूझा कि इस मुल्क में घूमना चाहिए। लेकिन घूमना हो तो कैसे घूमा जाय ? मोटर आदि साधन विचार-शोधक नहीं हैं। वे समय-साधक हैं, फासला काट सकते हैं। जहां विचार ढूंढ़ना है, वहां शांति का साधन चाहिए। पुराने जमाने में तो ऊंट, घोड़े आदि थे। लोग उनका उपयोग भी करते थे और रातभर में दो सौ मील तक निकल जाते थे। परन्तु शंकराचार्य, महावीर, बुद्ध, कबीर, चैतन्य, नामदेव-जैसे लोग हिन्दुस्तान में घूमे और पैदल ही घूमे। वे चाहते तो घोड़े पर भी घूम सकते थे; परन्तु उन्होंने त्वरित साधन का सहारा नहीं लिया; क्योंकि वे विचार का शोधन करना चाहते थे, और विचार-शोधन के लिए सबसे उत्तम साधन पैदल घूमना ही है। इस ज़माने में वह साधन एकदम सूझता नहीं; परन्तु शांति-पूर्वक विचार करें तो सूझेगा कि पैदल चले बिना चारा नहीं है।

वामनावतार का जन्म

इस तरह मैं वर्धा से शिवरामपल्ली आया और वहां से यहां तक अब कोई छः हफ्ते होते हैं। इस बीच मैंने हर गांव का अधिक-से-अधिक परिचय प्राप्त किया। कम्युनिस्टों के काम के पीछे जो विचार है उसका सारभूत अंश हमें ग्रहण करना होगा, उसपर अमल करना होगा। यह अमल कैसे किया जाय, इस बारे में मैं सोचता था तो मुझे कुछ सूझ गया। ब्राह्मण मैं था ही, वामनावतार मैंने ले लिया और भूमिदान मांगना शुरू कर दिया।

पहले-पहल लगता था कि इसका परिणाम वातावरण पर क्या होगा ? थोड़े-से अमृतबिन्दुओं से सारा समुद्र मीठा कैसे होगा ? पर धीरे-धीरे विचार बढ़ता गया। परमेश्वर ने मेरे शब्दों में कुछ शक्ति भर दी। लोग समझ गये कि यह जो काम चल रहा है, क्रान्ति का है और सरकार की शक्ति के परे है; क्योंकि यह काम तो जीवन बदलने का काम है।

अब लोग दान देने लगे। एक जगह हरिजनों ने अस्सी एकड़ मांगे और एक भाई ने सौ एकड़ दे दिए। इस तरह लोग मुझे देने लगे। यद्यपि लोगों ने मुझे काफी दिया तो भी मेरा काम इतने से पूरा नहीं होता। आज नलगुंडा के एक भाई आये। उन्होंने पहले पचास एकड़ दिये थे। उनकी जमीन का कुछ झगड़ा था, उसका निबटारा हो गया और आज उन्होंने पांच सौ एकड़ जमीन दे दी। उनके हिस्से की जमीन का यह चौथा हिस्सा होता है।

यह समस्या जागतिक है

इस तरह जब विचार फैलेगा तब काम होगा। मैं चाहता हूं कि दरिद्रनारायण को, जो भूखा है और अब जाग गया है, आप अपने कुटुम्ब का एक हिस्सा समझ लें और आपके परिवार में चार लड़के हैं तो उसे पांचवां मान लें। एक भाई के पास पांच एकड़ जमीन थी। उस भाई से मैंने जमीन मांगी तो उसने मुझे कहा कि मेरे घर में आठ लड़के हैं। मैंने पूछा कि अगर नौवां आया तो उसे भी सहोगे या नहीं? उसने कहा, "हां।" मैंने कहा, "यही समझो कि मैं नौवां हूं और मुझे भी कुछ दे

दो।" समझ लीजिये कि दस हजार एकड़वाला सौ एकड़ देता है। आंकड़ा दीखने को बहुत बड़ा दीखता है, पर दाता और दरिद्रनारायण दोनों के हिसाब से वह कम है। इस आंकड़े से मैं तो संतुष्ट हो जाऊंगा; परन्तु देनेवालों को नहीं होना चाहिए। अगर ऐसा होता कि यहां कोई भूख की या चंद लोगों के संकट-निवारण की समस्या होती और मैं दान मांगता तो थोड़ा-थोड़ा देने से भी काम चल जाता; परन्तु यहां तो एक राजकीय समस्या हल करनी है, एक सामाजिक समस्या सुलझानी है, जो समस्या न सिर्फ इन दो जिलों की है, न सिर्फ हिन्दुस्तान की है, बल्कि पूरी दुनिया की है। और जहां ऐसी राजनैतिक व समाजिक क्रान्ति करने की बात है, वहां तो मनोवृत्ति ही बदल देने की जरूरत होती है। अगर कोई छोटा-सा संकल्प होता तो अल्प दान से काम चल जाता; परन्तु यहां दस हजार जमीन रखनेवाले यदि सौ एकड़ देने लगेंगे तो काम नहीं चलेगा।

प्रेम और विचार की शक्तियों का आवाहन

उन्हें तो दरिद्रनारायण को अपने परिवार का एक हिस्सा समझकर दान देना चाहिए। मैं तो गरीब और श्रीमान सबका मित्र हूं। मुझे तो मैत्री में ही आनन्द आता है। जो शक्ति मैत्री में है वह द्वेष में नहीं है। अनेक राजाओं ने लड़ाइयां लड़कर जो क्रान्ति नहीं की, वह बुद्ध, ईसा, रामानुज आदि ने की। इनमें से एक-एक आदमी ने जो काम किया, वह अनेक राजाओं ने मिलकर नहीं किया। अर्थात्

प्रेम और विचार की तुलना में दूसरी कोई शक्ति नहीं है। इस वास्ते बार-बार समझाने का काम पड़े तो भी मैं तैयार हूं। दो दफा समझाने से कोई न समझ सका तो तीन दफा समझाऊंगा। तीन दफा समझाने से यदि नहीं समझ सका तो चार दफा समझाऊंगा और चार दफा समझाने से भी नहीं समझेगा तो पांच दफा समझाऊंगा। समझाना, यही मेरा काम है। जबतक मैं कामयाब नही होता तबतक मैं हारूंगा नहीं, निरंतर समझाता ही रहूंगा।

जो मैं चाहता हूं वह तो सर्वस्व-दान की बात है। जैसा पोतना कवि ने (तेलगु) भागवत में बताया है—"तल्लिदंड्रल भंगि धर्मवत्सलतनु दीनुल गाव चितिचुंवाडु।" माता-पिताके समान चिन्ता करने की यह उपमा मैं आपको लागू करना चाहता हू। जिस प्रेम से माता-पिता बच्चों के लिए काम करते ह, भूखे रहकर उन्हें खिलाते हैं, उनके लिए सर्वस्व का त्याग करते हैं, वह शक्ति और वह प्रेम मैं आप लोगों से प्रकट कराना चाहता हूं।

विचार-क्रांति के लिए भूमि तैयार है

आज मैं जेल में यह जानने के लिए कम्युनिस्ट भाइयों से मिलने गया था कि उनके क्या विचार चल रहे हैं। उनके साथ जो बातचीत हुई, वह पूरी यहां बताने की आवश्यकता नहीं है। पर उन्होंने एक सवाल मुझसे किया कि क्या आप इन श्रीमानों को वापस अपने घरों में ले जाकर बसाना चाहते है? क्या उनके दिल में परिवर्तन होनेवाला है? आपको वे लोग ठग रहे हैं। कुछ इस तरह

का उनका भाव था। मुझे वहां उनसे बहस नहीं करनी थी, न उनके हर प्रश्न का जवाब ही देना था। लेकिन अगर यह बात सही है कि हरएक के हृदय में परमेश्वर विराजमान हैं और हमारे श्वासोच्छ्वास का नियमन वही करता है और सारी प्रेरणा वही देता है तो मेरा विश्वास है कि परिवर्तन जरूर हो सकता है। अगर कालात्मा खड़ा है और कालात्मा परिवर्तन करना चाहता है तो परिवर्तन होने ही वाला है। मनुष्य चाहे या न चाहे, जब मनुष्य प्रवाह में पड़ता है तब उसकी तैरने की शक्ति ही उसके काम नहीं आती, प्रवाह की शक्ति भी काम आती है। उसी तरह मनुष्य के हृदय में परिवर्तन के लिए काल-प्रवाह मददरूप होता है। आज तो सबकी भूमि तपी हुई है। ऐसी तपी हुई भूमि पर प्रेम की दो बूंदें छिड़काने का काम अगर भगवान् मुझसे करवाना चाहता है तो मैं वह खुशी से कर रहा हूं। मैं तो गरीबों से भी जमीनें ले रहा हूं। एक एकड़वाले से भी मैं एक गुंठा ले आया हूं। अगर वह आधा गुंठा देता तो भी मैं ले लेता। लोग पूछते हैं कि एक गुंठा जमीन का मैं क्या करूंगा? मैं कहता हूं, "कोई हर्ज नहीं। जिसने मुझे वह एक गुंठा दिया है, उसीको ट्रस्टी बनाकर मैं वह जमीन उसे सौंप दूंगा और कहूंगा कि जो पैदावार उसमें होगी, वह गरीबों को दे देना।" एक एकड़वाले को एक गुंठा देने की वृत्ति होना, उसे ही मैं विचार-क्रान्ति कहता हूं। जहां विचार-क्रान्ति होती है, वहीं जीवन प्रगति की ओर बढ़ता है। 'अपि प्राज्यम् राज्यम् तृणमिव परित्यज्य सहसा'—एक घास

के तिनके की तरह राज्य का परित्याग करनेवाले त्यागी इस भूमि में हो गये हैं।

जीवन-परिवर्तन की प्रेरक प्रक्रिया

विचार-शक्ति की कोई हद नहीं होती। एक विचार एक मनुष्य को ऐसा सूझता है कि उससे मनुष्य के जीवन में क्रान्ति हो जाती है। आपने देखा, कुछ महापुरुष भी ऐसे होते हैं, जिनके विचार में ऐसी शक्ति होती है कि दूसरे के जीवन को पलट देते हैं। इसलिए विचार को जगाने के लिए मैंने उस गरीब से भी एक गुठा जमीन ले ली और जहां मैं उन श्रीमानों से जमीन ले रहा हूं, वहां उनके सिर पर मेरा वरदहस्त है--"भाइयो, तुम्हें अब शहर में भागकर जाने की आवश्यकता नहीं है। कबतक भागते रहोगे?" यानी जहां मैंने श्रीमानों से सौ एकड़ दान लिया, वहां मैंने उनके मन में एक अच्छा विचार भी जगा दिया। हरएक मनुष्य के दिल में अच्छे-बुरे विचार होते हैं। अब उसके हृदय में एक लड़ाई शुरू होती है, एक महाभारत युद्ध शुरू होता है।

"सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय
सच्चाऽसच्च वचसी पस्पृधाते
तयोर्यत् सत्यं यतरत् ऋजीयः
तदित् सोमोऽवति हंति आ असत्"

जाननेवाले जानते हैं कि हर मनुष्य के हृदय में सत् और असत की लड़ाई नित चलती रहती है। जो सत् होता है, उसकी रक्षा होती है और जो असत् है, उसका खात्मा

होता है। इसीलिए दाता ढोंगी है, ऐसा मानने का कारण नहीं है। परन्तु उसके द्वारा अन्याय के भी कई काम हुए होते हैं। बिना अन्याय के हजारों एकड़ जमीन कभी जमा हो सकती है? अर्थात् जिन्होंने दान दिया है, उन श्रीमानों के जीवन में कई तरह का अन्याय और अनीति का होना संभव है। परन्तु उनके हृदय में भी एक झगड़ा शुरू होगा कि क्या हमने जो अन्याय किया है वह ठीक है? परमेश्वर उन्हें बुद्धि देगा, वे अन्याय छोड़ देंगे। परिवर्तन इसी तरह हुआ करते हैं।

काल-पुरुष की प्रेरणा का साथ दीजिये

मेरी प्रार्थना है कि अब देने का जमाना आया है, आप सब लोग दिल खोलकर दीजिये। देने से एक दैवी सम्पत्ति निर्माण होती है। उसके सामने आसुरी सम्पत्ति टिक नहीं सकती, आसुरी सम्पत्ति लुट जाना चाहती है। वह ममत्वभाव पर आधार रखती है, समत्व नहीं जानती। दैवी तो समत्व पर आधार रखती है। दैवी और आसुरी सम्पत्ति की यह पहचान है।

जहां मैं दान लेता हूं वहां हृदय-मंथन की, हृदय-परिवर्तन की, मातृवात्सल्य की, भ्रातृ-भावना की, मैत्री की और गरीबों के लिए प्रेम की आशा करता हूं। जहां दूसरों की फिक्र की भावना जागती रहती है, वहां समत्व बुद्धि प्रकट होती है, वहां वैरभाव टिक नहीं सकता। वैरभाव का स्वतंत्र अस्तित्व ही नहीं होता। पुण्य में ताकत होती है, पाप में कोई ताकत नहीं होती। प्रकाश में शक्ति होती है,

अन्धकार में कोई शक्ति नहीं होती। प्रकाश को अन्धकार का अभाव नहीं कह सकते। प्रकाश वस्तु है, अन्धकार अवस्तु है। लाखों वर्षों के अन्धकार में प्रकाश ले जाइये, एक क्षण में अन्धकार का निवारण हो जायगा। वैसे ही आज पुण्योदय हुआ है। उसके सामने वैरभाव टिक नहीं सकता। यह भू-दान-यज्ञ एक अहिंसा का प्रयोग है, जीवन-परिवर्तन का प्रयोग है। मैं तो निमित्त मात्र हूं। आप भी निमित्त मात्र हैं। परमेश्वर आप लोगों से और मुझसे काम कराना चाहता है। वह काल-पुरुष की, परमेश्वर की प्रेरणा है। इसलिए मैं मांग रहा हूं, तब आप लोग दीजिये और दिल खोलकर दीजिये। जहां लोग एक फुट जमीन के लिए झगड़ते हैं, वहां मेरे कहने से लोग सैकड़ों-हजारों एकड़ जमीन देने के लिए तैयार हो जाते हैं। तो आप समझिये कि यह परमेश्वर की प्रेरणा है। इसके साथ हो जाइये। इसके विरोध में मत खड़े रहिये। इसमें से भला-ही-भला होगा।

विज्ञान ने प्रेम या युद्ध की समस्या खड़ी की है

आज मैं फिर से कहता हूं कि हम विज्ञान से पूरा लाभ उठाना चाहते हैं। अगर हम विज्ञान से पूरा लाभ उठायें तो इस भूमि को हम स्वर्ग बना सकते हैं। लेकिन फिर हमें विज्ञान के साथ हिंसा को नही, अहिंसा को जोड़ना होगा। अहिंसा और विज्ञान के मेल से ही यह भूमि स्वर्ग बन सकती है। हिंसा और विज्ञान के मेल से वह स्वर्ग नहीं बन सकती, बल्कि खत्म हो सकती है।

पहले लड़ाइयां छोटी-छोटी होती थीं। जरासंध-भीम लड़े, कुश्ती हुई, पाण्डवों को राज्य मिल गया, सारी प्रजा खून-खराबी से बच गई। अगर इस जमाने में वैसी लड़ाइयां लड़ी जायं तो इसमें हिंसा होने पर भी नुकसान कम है। इसलिए यह द्वंद्व मैं कबूल कर लूंगा। अगर हिटलर और स्टालिन कुश्ती के लिए खड़े हो जाते हैं और तय करते हैं कि जो हारेगा वह हारेगा और जो जीतेगा वह जीतेगा तो मैं उसे कबूल कर लूंगा। और अगर दुनिया वह द्वंद्व देखने को आती है तो मैं उसका निषेध नहीं करूंगा; क्योंकि दुनिया का उसमें विशेष नुकसान नहीं होगा। परन्तु द्वंद्व-युद्ध का जमाना अब बीत गया है। पहले द्वंद्व-युद्ध होते थे, फिर हजारों लोग आपस में लड़ने लगे। हजारों की लड़ाई खत्म हुई तो लाखों लड़ने लगे। उससे भी नतीजा नहीं निकला। फिर क्या, इधर बीस लाख तो उधर पच्चीस लाख और इधर पच्चीस तो उधर पचास लाख। इस तरह यह जमाना आया कि हजारों-लाखों नहीं, करोड़ों लोग आपस में लड़ने लगे। मनुष्य के सामने सवाल यह है कि या तो 'टोटल वार' की तैयारी करो या हिंसा छोड़ो और अहिंसा को अपनाओ। मैं कम्युनिस्टों को यही समझाता हूं कि भाइयो, तुम लोग कहीं दो-चार खून करते हो, कहीं दो-चार मकान जलाते हो, कहीं कुछ लूट-खसोट कर लेते हो, रात में आते हो, दिन में पहाड़ी में छिपते हो; लेकिन अब छिपने का जमाना खत्म हो चुका है। अब ऐसी हरकतों से कोई लाभ नहीं है। अगर लड़ाई लड़नी है तो विश्वयुद्ध ('वर्ल्ड वार') की तैयारी करो और उसी

की राह देखो। लेकिन जबतक करोड़ों के पैमाने पर हिंसा करने की तैयारी नहीं करते तबतक छोटी-छोटी लड़ाइयों का यह तरीका छोड़ दो और तुम्हें वोट देने का जो अधिकार मिला है उससे लाभ उठाओ। प्रजा को अपने विचार के लिए तैयार करो। जागतिक युद्ध या परिशुद्ध प्रेम, ऐसी समस्या विज्ञान ने हमारे सामने खड़ी कर दी है।

ममत्व त्यागो

इसलिए अगर प्रेम का, अहिंसा का तरीका आजमाना चाहते हो तो इन जमीनों का ममत्व छोड़ दो, नहीं तो हिंसा का ऐसा जमाना आनेवाला है कि उसमें सारी जमीनें और उस जमीन पर रहनेवाले प्राणी खतम हो जायगे। यह समझकर कि भगवान् ने यह समस्या हमारे सामने खड़ी कर दी है, भाइयो! निरंतर दान दिया करो।

इस भूदान-यज्ञ के पीछे जो तात्त्विक विचार-धारा है, वह मैंने आपके सामने रख दी है। मैंने यह कुछ विचार इसीलिए किया कि यह वारंगल काकतीयों की राजधानी है, बड़ा शहर है। यहां शिष्टों और सभ्यों का निवास है, बुद्धिमानों का केन्द्र है। अगर मैं अपना विचार यहां प्रकट करूं तो मेरा यह विचार फैलेगा।

वारंगल (तेलंगाना)
२९ मई १९५१

: २ :

भू-दान-यज्ञ

[गांधी-जयंती के दिन सागर में आयोजित सर्वोदय-सम्मेलन में दिया गया प्रवचन]

आज का दिन एक पवित्र दिन है। वैसे तो भगवान के दिये हुए सारे दिन पवित्र ही होते हैं और खासकर वे दिन अत्यन्त पवित्र होते हैं जब मनुष्य को कोई अच्छा संकल्प, अच्छा विचार सूझता है, अच्छा काम उससे होता है। लेकिन अलावा इसके, समाज-जीवन में और भी कुछ ऐसे दिन होते हैं, जबकि मनुष्य की सद्भावना जागृत हो उठती है। ऐसे दिनों में से आज का दिन है।

परमेश्वर ने सुझाई

मेरी यह यात्रा परमेश्वर ने मुझे सुझाई है, ऐसा ही मुझे मानना पड़ता है। छः माह पहले मुझे खुद को ऐसा कोई खयाल नहीं था कि जिस काम के लिए आज मैं गांव-गांव, द्वार-द्वार, घूम रहा हूं, वह कार्य मुझे करना होगा। उसमें मुझे परमेश्वर निमित्त बनाएगा। लेकिन परमेश्वर की कुछ ऐसी योजना थी, जिससे यह काम मुझे सहज ही स्फुरित हुआ और उसके अनुसार कार्य भी होने

लगा। होते-होते उसे ऐसा रूप मिल गया, जिससे लोगों की नजरों में भी यह बात आ गई कि यह एक शक्तिशाली कार्यक्रम है, जो हमारे देश के लिए ही नहीं, बल्कि आज के काल के लिए अत्यन्त उपयोगी है। यह एक युगपुरुष की मांग है। जिस तरह की भावना लोगों के दिलों में आ गई, उसका प्रतिबिम्ब मेरे हृदय में भी उठा। नतीजा यह हुआ कि तेलंगाना की यात्रा समाप्त करने के बाद बारिश के दिन वर्धा में बिताने के वास्ते मैं परंधाम आ बैठा और दो-ढाई महीने वहां रहकर फिर से निकल पड़ा हूं और घूमते-घूमते आपके इस गांव में आ पहुचा हूं।

आज महात्मा गांधी के जन्म का दिवस है। हम रोज सूत कातते हैं। आज भी यहां पर समुदाय के साथ सूत-कताई हुई। चन्द लोग उसमें सम्मिलित थे। तादाद उनकी बहुत कम थी। फिर भी आज की सूत-कताई में मुझे एक विशेष हस्ती की अनुभूति हुई और अभी जो मैं बोल रहा हूं वह उसकी हाजिरी में बोल रहा हूं।

हवा तैयार करने का काम

जो काम मैंने उठाया है, वह तो गरीब लोगों की भक्ति का काम है, श्रीमान् लोगों की भक्ति का काम है। सब लोगों की भक्ति उसमें हो जाती है। मेरा अपना विश्वास है कि यह कार्य सब लोगों के दिल में जंचनेवाला है। मैं जमीन मांगता फिरता हूं। किसी रोज कम मिलती है तो मुझे यह नहीं लगता कि जमीन कम मिली। मुझे यही लगता है कि जो भी मुझे मिलता है, केवल प्रसाद-

रूप है। आगे तो भगवान खुद अपने हाथों से भर-भर कर देनेवाला है और जब वह अनंत हाथों से देने लगेगा तब मेरे यह दो हाथ निकम्मे और अपूर्ण साबित होंगे। आज तो केवल एक हवा तैयार करने का काम हो रहा है। परमेश्वर का बल इस काम के पीछे है, ऐसा प्रतिक्षण में महसूस कर रहा हूं।

एक प्रार्थना

आज के पवित्र दिन में उससे पहले यह प्रार्थना करता हूं कि जमीन तो लोग मुझे दें, न दें, जैसी तेरी इच्छा हो, वैसा होने दे; लेकिन मेरी तुझसे इतनी ही मांग है कि मैं तेरा दास हूं, मेरी हस्ती मिटा, मेरा नाम मिटा। तेरा ही नाम दुनिया में चले। तेरा ही नाम रहे और जो भी राग-द्वेष आदि विकार मेरे मन में रहे हों, उन सबमें से तू इस बालक को मुक्त करना। इसके सिवा अगर मैं और कोई भी चाह अपने मन में रखता हूं तो तेरी कसम! मैं तुलसीदास की भाषा में बोल रहा हूं। लेकिन वह मेरी आत्मा बोल रही है।

"चहों न सुगति सुमति सम्पति कछु रिधि सिधि बिपुल बड़ायी।"

मुझे और किसी चीज की जरूरत नहीं, तेरे चरणों में स्नेह बढ़े, प्रेम बढ़े।

लोग पूछते हैं कि आप दिल्ली कब पहुंचेंगे? मैं कहता हूं--"मुझे मालूम नहीं, सब उसकी मर्जी पर निर्भर है। मेरी कुछ उमर भी हो चुकी है। शरीर भी कुछ थक गया है। लेकिन अन्तर में यही वृत्ति रहती है और नित उसीका अनुभव करता हूं। जरा ५ मिनट भी विश्राम मिलता है,

थोड़ा भी एकान्त मिलता है, तो मन में यह वासना उठती है कि मेरा सारा अहंकार खत्म हो जाय। इसके सिवाय कुछ भी विचार मन में नहीं आता। आज परमेश्वर के साथ मैं क्या भाषा बोल रहा हूं? मनुष्य की वाणी से क्या बयान कर रहा हूं? मैं बोल रहा हूं कि आज ईश्वर के साथ बापू की हस्ती का अनुभव मैं कर रहा हूं। मुझपर उनके निरन्तर आशीर्वाद रहे हैं। मैं तो स्वभाव से एक जंगली जानवर रहा हूं। न मुझे सभ्यता मालूम है। मैं तो बड़े-बड़े लोगों के सम्पर्क से डरता हूं। लेकिन आजकल निश्शंक होकर हर किसीके घर में चला जाता हूं। नारद-मुनि देवों में, राक्षसों में, मानवों में, सबमें चले जाते थे, उनको कहीं भी अप्रवेश नहीं था। वही हालत मेरी है। यह सब बापू के आशीर्वाद का चमत्कार है। मेरा विश्वास है कि मेरे इस काम में दुनिया के जिस गोशे में वह बैठे होंगे उनके हृदय का समाधान होता होगा।

"मारग में तारण मिले, सन्त राम दोई
सन्त सदा सीस ऊपर, राम हृदय होई।"

मीराबाई का यह वचन मुझपर भी ठीक लागू होता है। मुझे भी मार्ग में दो ही तारण मिले। भगवान की कृपा से एक का आशीर्वाद मेरे सिर पर रहा है। दूसरे का स्थान मेरे हृदय में रहा है।

सिर्फ उसीकी प्रेरणा से

आज मैं कुछ बोल तो रहा हूं; लेकिन मुश्किल से बोल सकने वाला हूं। कोशिश तो मैं यह करूंगा कि जो कहूं, अच्छी

तरह कह सकूं। मुझे बहुत दफा लगता है कि मैं घूमने के साथ-साथ कुछ बोल भी लेता हूं; लेकिन इससे क्या परिणाम आता होगा ? कल की ही बात है। एक गांव में जहां हम ठहरे थे, सारा दिन जहां बिताया, जहां मेरा एक व्याख्यान भी हुआ, वहां उस व्याख्यान के परिणाम-स्वरूप या कैसे भी कहिये, चार एकड़ जमीन मुझे मिली। फिर व्याख्यान समाप्त करके मैं अपनी जगह गया और उपनिषद् का चिन्तन शुरू किया। आजकल मेरे पास उपनिषद् रखे हैं।

दस मिनिट हुए कि एक भाई आये, जो न मेरी प्रार्थना में शामिल थे, न मेरा व्याख्यान सुन पाये थे। कहने लगे, "जमीन देने आया हूं।" ये भाई ६ मील दूरी से आये थे। अपनी ६ एकड़ जमीन में से एक एकड़ मुझे दे गये। मैंने सोचा, "किसकी प्रेरणा से यह हो रहा है ? जहां मैं दिन भर रहा, जहां मैंने व्याख्यान सुनाया, वहां ४ एकड़ और जहां मेरा व्याख्यान नहीं हुआ वहां से एक गरीब आता है और ६ में से एक एकड़ दे जाता है!" यह हुआ न हुआ कि एक दूसरे भाई जो दूरी से आये थे, बावन एकड़ देकर चले गये। मैं सोचने लगा कि लोगों के दिलों पर किसी चीज का असर होता है। आदमी को शब्दों की जरूरत क्यों पड़नी चाहिए ? अगर केवल जीवन शुद्ध हो जाय तो एक शब्द भी बोलना न पड़े और संकल्प मात्र से केवल घर बैठे काम हो जाय। लेकिन वैसा शुद्ध जीवन परमेश्वर जब देगा तब होगा। आज तो वह मुझे घुमा रहा है। मांगने की प्रेरणा दे रहा है। इसलिए मैं बोलता हूं और

मांगता हूं। लेकिन मेरे मन में यह संदेह नहीं है कि मेरे मांगने से कुछ होनेवाला नहीं है। जो होनेवाला है या हो रहा है, सब उसीकी प्रेरणा से हो रहा है।

मध्यप्रदेश और मैं

मैंने शुरू में ही कहा कि महाकोशल का यह आखिरी बड़ा मुकाम है। परन्तु अगर दिल्ली से वापस आना हुआ तो महाकोशल में से ही गुजरना पड़ेगा। यहां के लोगों से मिलने का फिर और एक अवसर मुझे प्राप्त होगा। मैं इस मध्यप्रदेश से बहुत कुछ आशा रखता हूं, इस वास्ते कि मैं ३० साल से इस मध्यप्रदेश में ही रहता आया हूं। अपने जीवन की जवानी का समय मैंने मध्यप्रदेश के लोगों की सेवा में बिताया। यहां के लोगों ने देखा कि कई राष्ट्रीय आन्दोलन आये और गए। कई चुनाव आये और गए; लेकिन यह शख्स अपने काम में निरंतर रत रहा। उसने न इधर देखा, न उधर। इस तरह मेरे जीवन की बहुत-सी तपस्या इस मध्यप्रदेश में हुई। अलावा इसके इस मध्यप्रदेश के जेल में ४ साल रहने का मौका मुझे मिला। वहां एक-दूसरे के निकट संपर्क में आना हुआ। जेल में जो रहते हैं वे एक-दूसरे को अच्छी तरह परख लेते हैं। वहां २४ घंटे परस्पर-संबंध रहता है। तो इस तरह आपके उत्तमोत्तम लोगों के संपर्क में आया। उन लोगों ने मेरा जीवन देखा। अगर मैंने कुछ किया तो सबपर प्रेम ही किया, और कुछ नहीं किया। वहां कितने ही विचार के लोग थे। अलग-अलग पक्ष के भी थे; परन्तु मैंने तो

मनुष्य को मनुष्य के नाते पहचाना। इस तरह मेरा सारा जीवन इन लोगों ने बरसों तक देखा। मेरा कोई गुण-दोष उनसे छिपा नहीं रहा। जिनके साथ मैंने अपनी उम्र के ४ बरस बिताये, उनके सामने कोई गुण-दोष छिपकर नहीं रह सकता था। मैंने देखा कि ऐसा एक भी भाई नहीं, जिसका प्रेम मुझे नहीं मिला। इसलिए मैं आप सबसे बहुत आशा रखता हूं।

मैं चाहता क्या हूं? मेरे एक भाई ने लिखा है कि आपके लिए हजार रुपए जमा हुए हैं और सौ आदमियों के भोजन का प्रबंध भी किया गया है। लेकिन यहां जो कुछ हुआ है और हो रहा है, एक परिषद् के लिए हो रहा है। मेरे स्वागत के लिए इतने पैसे की जरूरत नहीं। मेरा पेट बहुत छोटा है। उसके लिए इतने पैसे की आवश्यकता नहीं। मेरा काम किस तरह आगे बढ़ेगा इस बारे में जो सेवकगण यहां आ गये हैं वे विचार-विमर्श करेंगे और अपनी-अपनी जगह जाकर काम भी करेंगे। इसीलिए यह परिषद् बुलाई है। लेकिन यद्यपि मेरी भूख बहुत कम है, दरिद्रनारायण की भूख बहुत ज्यादा है। इसलिए जब मुझसे पूछते हैं कि आपका अंक क्या है, कितनी जमीन आपको चाहिए तो मैं जवाब देता हूं, "पांच करोड़ एकड़।" जो जमीन जेरे-काश्त है उसीकी मैं बात कर रहा हूं। अगर परिवार में पांच भाई हैं तो एक और छठवां मुझे मान लीजिये। चार हों तो पांचवां। इस तरह कुल जेरेकाश्त जमीन का यह पांचवां या छठवां हिस्सा होता है।

भू-दान-यज्ञ

यह जो काम हो रहा है वह सामान्य दान का काम नहीं है, बल्कि भू-दान का है। अगर हम किसीको एक रोज भी खाना खिलाते हैं तो बहुत पुण्य मिलता है। एक रोज के अन्न-दान का अगर इतना मूल्य है तो एक एकड़ जमीन का, जिससे एक आदमी की सारी जिन्दगी बसर हो सकती है, कितना मूल्य होगा? इसलिए दरिद्रनारायण के वास्ते सारे लोगों से कुछ-न-कुछ मिलना चाहिए। इसीका नाम यज्ञ है। इसलिए हर शख्स से मैं कहता हूं कि भाई, मुझे कुछ-न-कुछ दे दो।

गांधीजी के बाद सर्वोदय के सिद्धान्त को माननेवाले हम कुछ लोगों ने एक समाज बनाया है, जिसमें कोई किसी से द्वेष नहीं करता। सब सबसे प्रेम-भाव रखते हैं। कोई किसीका शोषण नहीं करता। मेरा विश्वास है कि जैसे ही हम शोषण-रहित समाज का निर्माण कर सकेंगे, हिन्दुस्तान के लोगों की प्रतिभा प्रकट हुए बिना नही रहेगी। इसलिए हम सर्वोदयवालों ने निश्चय किया कि यह समाज-रचना हम बदल देंगे। मेरा इसमें विश्वास है, नहीं तो मुझे इस तरह खुले दिल से जमीन मांगने की हिम्मत नही होती। मैं जानता हूं कि जितनी मेरी योग्यता है उससे ज्यादा फल ईश्वर ने मुझे दिया है। मुझे जरा भी शिकायत नहीं कि मुझे फल कम मिला। इसलिए मेरा काम इतना ही है कि लोगों को मैं अपना विचार समझाऊं।

सागर,
२-१०-'५१

: ३ :

प्रजासूय-यज्ञ में भाग दीजिये

[देशवासियों के नाम विनोबाजी की अपील]

मेरे प्यारे भारतवासी बन्धुजनो,

गये वर्ष गरमी के दिनों में मैं तेलंगाना में घूमता था। वहां जो विकट समस्या खड़ी थी, उसके बारे में मेरा चिन्तन रोज चलता था। एक दिन हरिजनों की मांग पर मैंने ग्रामवालों से भूमि-दान की बात कही। गांववालों ने वह बात मान ली और मुझे पहला भूमि-दान मिला। अठारह अप्रैल (१९५१) का वह दिन था। उसके बाद भूमिदान-यज्ञ की कल्पना मुझे सूझी और उसको तेलंगाना के दौरे में मैंने आजमाया। परिणाम अच्छा रहा। दो महीनों में बारह हजार एकड़ जमीन मिली। वहां की परिस्थिति सुलझाने में, मेरा खयाल है, उससे बहुत मदद मिली। सारे देश पर उसका असर पड़ा, और आज हम देखते हैं कि तेलंगाना का वातावरण काफी शान्त हो गया है।

गांधीजी के जाने के बाद अहिंसा के प्रवेश के लिए मैं रास्ता ढूंढ़ता था। मेवात के मुसलमानों को बसाने का

सवाल उसी खयाल से मैंने हाथ में लिया था। उसमें कुछ अनुभव मिला। उसी आधार पर मैंने तेलंगाना में जाने का साहस किया था। वहां भू-दान-यज्ञ के रूप में मुझे अहिंसा का साक्षात्कार हुआ।

तेलंगाना में जो भू-दान मिला, उसके पीछे वहां की एक पृष्ठ-भूमि थी। उस पृष्ठ-भूमि के अभाव में शायद हिन्दुस्तान के दूसरे हिस्सों में वह कल्पना चले या न चले, इस बारे में शंका हो सकती थी। उस शंका के निरसन के लिए दूसरे प्रदेशों में भू-दान-यज्ञ को आजमाना जरूरी था। प्लानिंग कमीशन के सामने मेरे विचार रखने के लिए पंडित नेहरू ने मुझे निमन्त्रण दिया। उस निमित्त से में पैदल-यात्रा पर निकल पड़ा और दिल्ली तक दो महीने में करीब अठारह हजार एकड़ जमीन मुझे मिली। देखा कि अहिंसा को प्रवेश देने के लिए जनता उत्सुक है।

उत्तर प्रदेशवाले सर्वोदय-प्रेमी कार्यकर्त्ताओं की मांग पर मैंने उत्तर-प्रदेश के व्यापक क्षेत्र में भू-दान-यज्ञ का प्रयोग आरम्भ किया। उत्तर-प्रदेश में एक लाख से ज्यादा देहात हैं। हर गांव में कम-से-कम एक सर्वोदय परिवार बसाया जाय और एक परिवार को कम-से-कम पांच एकड़ जमीन दी जाय, इस हिसाब से पांच लाख एकड़ जमीन प्राप्त करने का संकल्प किया गया था। बावजूद इसके कि बीच में तीन महीने अधिकतर कार्यकर्त्ता चुनाव में व्यस्त थे, लोगों का सहयोग अच्छा रहा। एक लाख एकड़ तक हम पहुंच गये। में तो इसमें ईश्वरी संकेत देखता हूं। मेरे बहुत से साथियों

को भी ऐसा ही लगा। नतीजा यह हुआ कि सेवापुरी के सर्वोदय-सम्मेलन में सबने मिलकर सारे हिन्दुस्तान में अगले दो साल के अन्दर कम-से-कम २५ लाख एकड़ जमीन प्राप्त करने का संकल्प किया। यह बात अब आप लोगों को मालूम हो गई है।

२५ लाख एकड़ से हिन्दुस्तान के भूमिहीनों का मसला हल हो जाता है, ऐसी बात नहीं। उसके लिए तो कम-से-कम पांच करोड़ एकड़ जमीन चाहिए। लेकिन प्रथम किस्त के तौर पर अगर हम पच्चीस लाख एकड़ कर लेते हैं और हिन्दुस्तान के पांच लाख गांवों में अहिंसा का संदेश पहुंचा देते हैं तो भूमि के न्यायोचित वितरण के लिए जरूरी हवा तैयार हो जायगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

जमीन बड़े काश्तकारों और जमींदारों से तो मैं मांगता ही हूं; लेकिन छोटे-छोटे काश्तकारों से भी इसमें हाथ बटाने की मैंने प्रार्थना की है। और मुझे कहने में खुशी होती है कि बड़े दिलवाले इन छोटे लोगों ने बहुत प्रेम से मेरी प्रार्थना मान्य की है। इस यज्ञ मे कई शबरियों ने अपने बेर दिये हैं और कई सुदामाओं ने अपने तंदुल समर्पण किये हैं। यह मेरे लिए एक चिरस्मरणीय भक्त-गाथा हुई है। इसमें दरिद्रों को आत्मोद्धार की प्रेरणा मिली है और श्रीमानों को आत्म-शुद्धि और स्वामित्व-मिरसन की।

मुझे भूमि सब तरह के लोगों ने दी है। हिन्दुओं ने दी है, मुसलमानों ने दी है, दूसरे धर्मवालों ने दी है। जो सब तरह से "सब हारा" गिने जायंगे, ऐसे हरिजनों ने भी दी है।

जिसका भूमि पर अधिकार नहीं माना जाता, ऐसी स्त्रियों ने भी दी है। देनेवालों में सब तबकों और सब पक्षों के लोग शामिल हैं। दरिद्रनारायण को अपने कुटुम्ब का एक अंश समझकर हक के तौर पर दी जाय, इस तरह मैंने जमीन मांगी है। और वैसी ही भावना से लोगों ने दी है।

भूमिदान-यज्ञ में 'दान' शब्द आता है। उससे परहेज करने की जरूरत नहीं है। "दानम् संविभाग:"—दान यानी सम्यक् विभाजन। यह है शंकराचार्य का दान का व्याख्यान। उसी अर्थ में हम उस शब्द का प्रयोग करते हैं। जिसको जमीन मिलेगी, वह मुफ्त खानेवाला नहीं है। वह जमीन पर मेहनत-मशक्कत करेगा, अपना पसीना उसमें मिलायेगा, तब खा सकेगा। इसलिए उसे दीन बनने का कारण नहीं है। उसका अपना अधिकार हम उसे दिला रहे हैं।

हम विनय से, प्रेम से, और वस्तुस्थिति समझकर मांगते हैं। हमारे तीन सूत्र हैं :

१. हमारा विचार समझने पर अगर कोई नहीं देता है तो उससे हम दु:खी नहीं होते हैं; क्योंकि हम मानते हैं कि जो आज नहीं देता है, वह कल देनेवाला है। विचार-बीज उगे बगैर नहीं रहता।

२. हमारा विचार समझकर अगर कोई देता है तो उससे हमें आनन्द होता है; क्योंकि उससे सब जगह सद्भावना पैदा होती है।

३. हमारा विचार समझे बगैर किसी दबाव के कारण अगर कोई देगा तो उससे हमें दु:ख होगा। हमें किसी तरह

जमीन बटोरना नहीं है, बल्कि साम्ययोग और सर्वोदय की वृत्ति निर्माण करनी है।

मैं मानता हूं कि यह एक ऐसा कार्यक्रम हमें मिला है कि जिसमें सब पक्षों के लोगों को समान भूमि पर काम करने का मौका मिलता है। लोग कांग्रेस की शुद्धि की बात करते हैं। शुद्धि की तो सब संस्थाओं को जरूरत है। लेकिन कांग्रेस का नाम इसलिए लिया जाता है कि वह बड़ी संस्था है। मेरा विश्वास है कि कांग्रेस और दूसरी संस्थाएं अगर इस कार्यक्रम को अपनायंगी और सत्य-अहिंसा के तरीके से उसे चलायंगी तो उससे सबकी शुद्धि होगी, सबका बल बढ़ेगा और सबमें एकता आयगी।

मेरे भारतवासी बंधुजनो, आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप इस प्रजासूय-यज्ञ में अपना भाग दें और इस काम को सफल करके आर्थिक क्षेत्र में अहिंसा की प्रतिष्ठा करें। मेरा इस काम के लिए तिहरा दावा है। एक तो यह कि यह भारतीय सभ्यता के लिए अनुकूल है, दूसरा इसमें आर्थिक और सामाजिक क्रांति का बीज है, और तीसरा इससे दुनिया में शान्ति-स्थापना के लिए मदद मिल सकती है।

मैं जानता हूं कि सारे हिन्दुस्तान के सामने कोई कार्यक्रम रखने का मुझे कोई अधिकार नहीं है। लोगों को आदेश देनेवाला मैं कोई नेता नहीं हूं। ग्रामीणों की सेवा को ही अपनी परमार्थ-साधना समझनेवाला मैं एक भक्ति-मार्गी मनुष्य हूं। आज अगर गांधीजी होते तो इस तरह लोगों के सामने मैं उपस्थित नहीं होता, बल्कि वही देहात का

भंगी-काम और वही कांचन-मुक्त खेती का प्रयोग करता हुआ मैं आपको दीखता। लेकिन परिस्थितिवश मुझे बाहर आना पड़ा है और एक महान यज्ञ का पुरोहित बनने की धृष्टता करनी पड़ी है। यह धृष्टता या नम्रता जो भी हो, परमेश्वर को समर्पण करके मैं सब भाई-बहनों के सहयोग की याचना कर रहा हूं।

अकबरपुर,
२८-४-'५२

विनोबा-साहित्य

विनोबा के विचार (दो भाग)—विनोबाजी के निबन्धों व व्याख्यानोंका महत्वपूर्ण संग्रह। **प्रति भाग** २)

गीता-प्रवचन—गीता के प्रत्येक अध्याय का बड़ी ही सरल, सुबोध शैली में विवेचन। **अजिल्द** १।), **सजिल्द** २।)

शांति-यात्रा—गांधीजी के देहावसान के बाद अनेक स्थानों में दिये गए विनोबाजी के प्रवचन। **अजिल्द** २॥), **सजिल्द** ३॥)

स्थितप्रज्ञ दर्शन—स्थितप्रज्ञ के लक्षणों की व्याख्या। २।)

ईशावास्यवृत्ति—ईशोपनिषद् की विस्तृत टीका। १)

ईशावास्योपनिषद्—मूल श्लोकों सहित ईशोपनिषद् का सरल अनुवाद। =)

सर्वोदय-विचार—सर्वोदय-विषयक लेखों व प्रवचनों का संग्रह। ॥)

स्वराज्य-शास्त्र—प्रश्नोत्तर के रूप में विनोबाजी द्वारा स्वराज्य की परिभाषा, अहिंसात्मक राज्य-पद्धति एवं आदर्श राज्य-व्यवस्था का विवेचन। १)

भू-दान-यज्ञ—देश के भूमिहीनों की दुर्दशा से प्रभावित होकर भूमि के समवितरणार्थ दिये गए मूल्यवान प्रवचन। ।)

राजघाट की संनिधि में—भू-दान-यज्ञ के सिलसिले में दिल्ली में दिये गए विनोबाजी के प्रवचन। ॥।=)

सर्वोदय-यात्रा—सर्वोदय-सम्मेलन शिवरामपल्ली के अवसर पर पैदल-यात्रा में दिये गए प्रवचनों का संग्रह। १।)

गांधीजी को श्रद्धांजलि—गांधीजी के प्रति विनोबाजी की सर्वोत्तम श्रद्धांजलि। ।=)

●